गुरु गोविन्द सिंह

मधुरिमा कोहली



बच्चों की कहानियां

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

हमारी बात

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगड़ों, जलन और बैर की वजह से हम कमजोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये जमाने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमजोर और खतरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हकीकत है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुकाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर जोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैगम्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज्जत की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफसोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमजोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की जरूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना जरूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और जिन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बड़े-बड़े संत-पैगम्बरों की जिन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुड़ी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

गुरु गोविंद सिंह

मधुरिमा कोहली

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

संपादक :

मूलशंकर भट्ट

चित्रकार :

महादेव नारायण

प्रकाशक :
वाडीलाल डगली
मानद मंत्री
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग
७ – नेताजी सुभाष रोड
बंबई–४०० ००२

मुद्रक :
जितेन्द्रभाई ठाकोरभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय
अहमदाबाद–३८० ०१४

मूल्य :
दो रुपये

गुरु गोविंद सिंह

"आज क्या खेलेंगे गोविंद ?"

"आज ? आज खेलेंगे लड़ाई का खेल। सारे दोस्त दो दलों में बंट जाओ। एक दल की दूसरे से लड़ाई होगी। यह देखो, मेरे पास कितना सुंदर धनुष और कितने मजबूत तीर हैं !"

सारे दोस्त दो दलों में बंट गये।

"तुम्हारे पास तीर-धनुष है तो सेनापति तुम ही बनो गोविंद। हमारा दल जरूर जीतेगा।"

लड़ाई का यह खेल बच्चों का सबसे प्यारा खेल बन गया। रोज ही वे खेल खेलते। और खेल-खेल में ही वार करने के नये-से-नये दाव खोज निकालते।

यही गोविंद सिक्खों के दसवें गुरु गोविंद सिंह के नाम से जाना जाता है। इस बालक का जन्म २२ दिसंबर १६६६ ई. को पटना में हुआ। माता गुजरी ने नाम रखा गोविंद राय। पिता गुरु तेगबहादुर उन दिनों बंगाल के ढाका नगर में थे। वे धर्मगुरु गुरु नानक का संदेश लोगों तक पहुंचाने के लिए जगह-जगह की यात्रा कर रहे थे।

बालक गोविंद का बचपन पटना में अपने मामा, मां और दादी के साथ बीता। गोविंद खेल का बहुत शौकीन था।

लड़ाई का खेल खेलनेवाला यह गोविंद कभी-कभी शैतानी भी करता। पानी के घड़े ले जाती हुई स्त्रियों के घड़े कंकड़ मारकर फोड़ देना भी उसका बहुत प्यारा खेल था।

अपने छोटे-छोटे साथियों की सेना लेकर गोविंद गंगा के किनारे जा पहुंचता। नाव में बैठकर सैर करते

समय पानी उछाल-उछालकर लोगों पर छींटों की बौछार करता। वहीं घाट पर रहते थे पंडित शिवदत्त। वे अपने सामने ठाकुरजी की मूर्तियां रखे, आंखें बंद किए अपनी ध्यान-साधना में लीन बैठा करते थे। बालक गोविंद अपने दोस्तों के साथ वहां पहुंच जाता और पानी उछाल-उछालकर इतना शोर मचा देता कि बेचारे पंडितजी को आंखें खोलनी पड़तीं। पर ये पंडितजी गोविंद को प्यार भी बहुत करते थे। उन्हें बच्चों की इन शैतानियों पर कभी गुस्सा नहीं आता था।

उन दिनों पटना में एक जागीरदार था फतहचंद मैनी। उसे सब लोग राजा कहते थे। उसकी रानी संतान न होने के कारण बहुत उदास रहती थी। राजा और रानी इसी सिलसिले में पंडित शिवदत्त से मिलने आये। शिवदत्त ने उन्हें गोविंद से मिलवाया।

एक दिन रानी अपने घर के आंगन में कुछ उदास बैठी थी। उसी समय गोविंद वहां आ पहुंचा। वह मां, मां कहता हुआ प्यार से रानी के गले में बाहें डालकर, उसकी गोदी में जा बैठा। रानी को उस समय इस बच्चे पर इतना प्यार आया कि वह उसे तब से अपना ही बेटा मानने लगी।

उस दिन घर पहुंचकर गोविंद



ने मां को बताया, "मुझे तो आज एक और मां मिल गयी है।"

मां ने पूछा, "एक बेटा दो गोदियों में कैसे बैठ सकेगा?"

गोविंद बोला, "जैसे एक चांद दो तालाबों में एक साथ दिखायी देता है।"

गोविंद अपने दोस्तों के साथ खेल में इतना मस्त हो जाता कि रोज शाम को देर से घर लौटता। उसकी वजह से घर में शाम की पूजा में सब को देर हो जाती।

बालक गोविंद का बचपन ऐसी कौतुकभरी लीलाओं में बीत रहा था। अपने साथियों में वह सबसे बहादुर था और सबको साहसी बनने के लिए प्रेरित भी करता रहता था।

उन दिनों पटना में एक बड़ा घमंडी नवाब था। वह हाथी पर सवार होकर जब शहर में निकलता तो चाहता कि सब लोग झुक-झुककर उसे सलाम करें। हाथी को देखने के लिए बच्चों की भीड़ जमा हो जाती।

एक दिन गोविंद भी अपनी सेना के साथ वहां जा पहुंचा।

नवाब के महावत ने हुक्म दिया, "बच्चो, नवाब साहब को सिर झुकाकर सलाम करो!"

महावत के बोलने का तरीका और नवाब का घमंड गोविंद को बिलकुल अच्छा नहीं लगा। उसने अपने साथियों से कहा, "न कोई सिर झुकायेगा और न ही कोई सलाम करेगा। ये अकड़ू हैं, इन्हें चिढ़ाओ।"

बच्चे तालियां बजाते रहे, हंसते-मुस्कराते नवाब और महावत को मुंह चिढ़ाते रहे।

गोविंद की पढ़ाई शुरू हुई। माता गुजरी ने गुरुमुखी सिखानी शुरू की। इन दिनों गोविंद का बहुत मन होता कि पिता भी उसके पास हों। उनसे वह बहुत कुछ जान-सीख सकता, लेकिन अब तक पिता से वह बस एक ही बार मिल पाया था, जब असम की यात्रा से लौटते हुए वे पटना में कुछ समय रुके थे।

एक दिन वह खबर आ गयी जिसका गोविंद को इतने दिनों से इंतजार था। वह अब अपनी मां और दादी के साथ पंजाब जायेगा, जहां वे सब पिता के साथ रहेंगे।

लगभग एक वर्ष की यात्रा के बाद वे आनंदपुर पहुंचे।

शिवालिक की पहाड़ियों से घिरी यह अत्यंत सुन्दर नगरी गुरु तेगबहादुर ने

बसायी थी। दूर और पास से अनेक सिक्ख गोविंद को देखने और उसका स्वागत करने आते और तरह-तरह के उपहार भी उसके लिए लाते। इन उपहारों में तरह-तरह के हथियार भी होते थे और एक-से-बढ़कर-एक घोड़े भी। गोविंद को घोड़ों का उपहार सबसे प्यारा लगता था।

पढ़ाई से बचा समय गोविंद खेल-कूद में बिताता था। हथियारों की लड़ाई का पुराना खेल अभी भी चलता था, पर अब वह घोड़े की सवारी करना, तैरना, तीर से निशाना साधना, नाव चलाना आदि भी सीखने लगा था। गोविंद के जीवन के ये दिन सबसे प्यारे दिन थे। पिता का प्यार सबसे बड़ा वरदान था जो उसे अब मिल रहा था।

गोविंद अब नौ वर्ष का हो गया था।

एक दिन वह अपने दोस्तों के साथ खेल रहा था कि खबर मिली कि औरंगजेब के हुक्म से दिल्ली में उसके पिता का सर उतार लिया गया है।

गोविंद को पिता के दिल्ली के लिए चलने से पहले की सारी घटना याद हो आयी।...कुछ कश्मीरी पंडित उसके पिता से मिलने आये थे। उन्होंने बताया था कि बादशाह औरंगजेब उन्हें अपना धर्म छोड़कर इस्लाम कबूल करने के लिए मजबूर कर रहा है। पिता गुरु तेगबहादुर ऐसी धार्मिक तंगदिली का विरोध करते थे।

उन्होंने कहा था, "लगता है अत्याचारों का यह तूफान किसी महापुरुष का बलिदान लेकर ही रुकेगा।"

पास खड़े गोविंद ने तब सहज ही कह दिया था, "पिताजी, आपसे ज्यादा लायक महापुरुष आज और कौन है?"

पिता ने तभी दिल्ली जाने का फैसला कर लिया।...और आज यह खबर।...गोविंद की इच्छा हुई कि तुरंत तलवार लेकर जाये और पिता के हत्यारों से बदला ले। लेकिन वह जानता था कि मुगलों से टकराने के लिए जितनी शक्ति चाहिए, अभी वह उसके पास नहीं है।

इस घटना का असर कहीं बहुत गहरे गोविंद के दिल पर पड़ा था। बाद में उसे यह भी बताया गया कि बादशाह औरंगजेब से उनके साथी इतने डरे हुए थे कि उनमें से किसी

ने भी मुगल सैनिकों के सामने गोविंद के पिता के शरीर को उठाने की हिम्मत नहीं दिखायी। . . .

"अपने लोगों में से डर की इस कमजोरी को निकालना होगा और अन्याय और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष जारी रखना होगा।" . . . गोविंद ने तभी सोचा था।

सब लोगों को संबोधित करके उसने कहा, "हमें गुरु के लिए शोक नहीं मनाना है। गुरु ने अपना बलिदान दिया है, हमारे सामने एक महान उदाहरण रखा है। ऐसे लोग अमर होते हैं।"

लोगों ने बालक गोविंद के असाधारण गुण पहचाने। हजारों स्त्री-पुरुषों, बूढ़ों, बच्चों, जवानों ने इस बच्चे में अपने पंथ के नये गुरु होने की योग्यता और प्रतिभा को पहचाना। २१ मार्च १६७६, बैसाखी के दिन गोविंद को गुरु की गद्दी पर बैठाया गया।

गोविंद हजारों सिक्खों के गुरु बन गये।

आनंदपुर में अब उनका एक नया जीवन शुरू हुआ। दूर-दूर से लोग नये गुरु के दर्शनों के लिए आनंदपुर आते और तरह-तरह के उपहार लाते। गुरु का निर्देश था कि लोग उपहार में हथियार और घोड़ों को प्रमुखता दें।

बहुत से लोग आनंदपुर में ही आकर बस गये थे। वे आनंदपुर को गुरु का घर मानते थे। उनका खर्च गुरु-भंडार से चलता था। गुरु के पास अब सिपाहियों की एक ऐसी टुकड़ी थी जो आनंदपुर की रक्षा कर सकती थी।

गुरु गोविंद सिंह भक्ति और शक्ति के साथ-साथ साहित्य पर भी ध्यान देते थे। वे कवियों को अपने यहां रहने का निमंत्रण देते और उन्हें जरूरी सुविधाएं देते थे, ताकि वे निश्चित होकर साहित्य की रचना कर सकें।

गुरु की उम्र के साथ-साथ उनका तेज-प्रताप भी बढ़ता जा रहा था।

उपहारों में मिले हथियारों को सुरक्षित रखने के लिए किलों की जरूरत थी। इसलिए किले बनाये जाने लगे।

गुरुजी ने एक बड़ा नगाड़ा भी बनवाया, जिसका नाम 'रणजीत नगाड़ा' रखा गया। इसकी आवाज मीलों दूर तक सुनी जा सकती थी। उपहार में मिली चीजों में कुछ इतनी अनोखी थीं जो बड़े-बड़े राजाओं के पास भी न थीं। इनमें एक था बहुत

ही सुंदर कारीगरीवाला तंबू और दूसरा था सफेद रंग का एक हाथी, जो 'प्रसादी' के नाम से प्रसिद्ध था।

गुरु का यह बढ़ता हुआ प्रभाव आनंदपुर के आस-पास के रियासती राजाओं के लिए ईर्ष्या का कारण बन गया था।

ये सभी पहाड़ी राजा छुआछूत और जातिभेद को माननेवाले थे। गुरुजी के विचारों से उनके विचार नहीं मिलते थे। इसलिए ये गुरुजी से किसी-न-किसी बहाने लड़ाई मोल लेने लगे।

राजा भीमचंद ने एक बार गुरु से अपने बेटे की शादी के बहाने तंबू और हाथी मांगा। गुरुजी किसी से



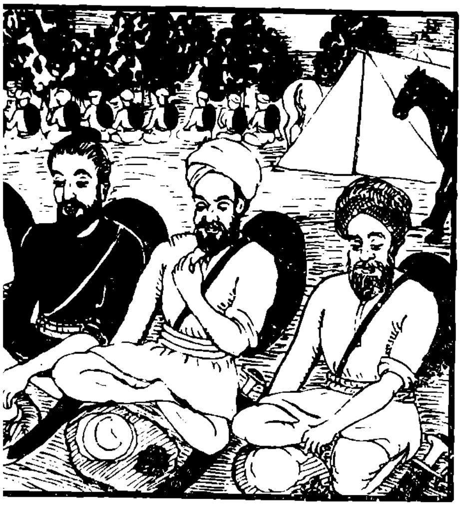
मिली भेंट को किसी दूसरे को कैसे दे सकते थे! उन्होंने मना कर दिया।

राजा भीमचंद ने गुरुजी को धमकी दी, "या तो हाथी दो या लड़ाई करो।"

गुरुजी ऐसी धमकियों से डरनेवाले नहीं थे। उन्होंने लड़ाई की चुनौती मंजूर कर ली। किंतु उस समय अन्य पहाड़ी राजाओं ने किसी तरह भीमचंद को यह समझाया कि अभी लड़ाई करना ठीक नहीं है।

नाहन रियासत का राजा मेदिनी-प्रकाश गुरुजी के विचारों से बहुत प्रभावित था। जब उसे मालूम हुआ कि राजा भीमचंद तथा कुछ अन्य पहाड़ी राजा गुरुजी से विरोध पाल रहे हैं, तो वह बहुत दुःखी हुआ। उसने गुरुजी को अपनी रियासत में आने का निमंत्रण दिया। गुरुजी पहाड़ी राजाओं से नाहक की लड़ाई नहीं चाहते थे। उन्होंने नाहन आने का निमंत्रण स्वीकार कर लिया। इस प्रकार यह लड़ाई टल गयी।

नाहन में गुरुजी को एकांत तथा सुंदर प्राकृतिक जगह मिली। वहां रहकर वे अच्छी तरह साहित्य-रचना कर सकते थे।



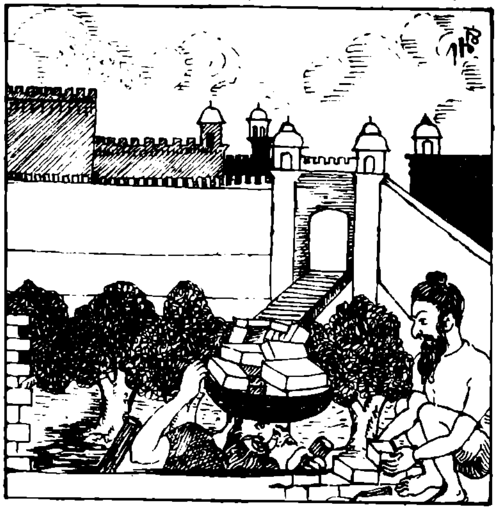
नाहन रियासत में ही एक सुंदर
ह उन्होंने अपने लिए चुनी जिसका
। 'पाऊंटा' रखा गया। राजा
ानीप्रकाश की सहायता से वहां
की सुविधा तथा सुरक्षा का पूरा
जाम किया गया। दूर-दूर के साधु,
, योद्धा तथा कवि वहां आने लगे।
अनेक कवियों को गुरुजी ने महा-
ारत, रामायण आदि का आसान
ा में अनुवाद करने के लिए कहा।
जी ने खुद भी अपनी अनेक किताबों
रचना पाऊंटा में रहकर की। लेकिन
। लड़ाई को गुरुजी टाल आये थे,
टली नहीं।

पहाड़ी राजाओं ने पाऊंटा पर
ला करने की योजना बनायी। उनका
ाल था कि पाऊंटा में गुरुजी के
पास अधिक सैनिक-बल नहीं है, इसलिए जीत उनकी होगी। गुरुजी को जब उनकी ओर से लड़ाई की तैयारियों की खबर मिली तो उन्होंने भी अपने सिक्खों को तैयारी करने को कहा।

जंग के लिए पहली बार रणजीत नगाड़ा गरज उठा।

पहाड़ी राजाओं और गुरुजी के बीच यह लड़ाई अप्रैल सन् १६८९को आरंभ हुई। तीन दिनों तक घमासान जंग हुआ। यह गुरुजी की पहली लड़ाई थी। इस युद्ध में उन्हें जीत मिली।

पहाड़ी राजाओं के साथ के इस युद्ध ने साफ कर दिया था कि गुरुजी को अब भविष्य में भी लड़ाई के लिए तैयार रहना होगा। इसे ध्यान में रखकर



उन्होंने आनंदपुर के पास चार मजबूत किले और बनवाये, हथियारों का कारखाना खोला।

इसके साथ-ही-साथ साहित्य का काम भी चलता रहा। अत्याचार और अन्याय के खिलाफ संघर्ष लोगों के जीवन का मकसद बने, इसके लिए गुरु गोविंदसिंह पुराणों से भारतीय वीरों की कहानियां हिंदी में अनुवाद करके लोगों तक पहुंचाते थे।

गुरुजी की बढ़ती हुई ताकत की खबरें औरंगजेब तक पहुंचने लगी थीं। इधर पहाड़ी राजाओं ने भी बहुत समय से दिल्ली की सरकार को दिया जानेवाला कर अदा नहीं किया था। औरंगजेब ने १३ जुलाई, १६९६ को अपने बड़े शहजादे मुअज्जम को एक शक्तिशाली सेना के साथ पहाड़ी राजाओं तथा गुरुजी को दबाने के लिए भेजा।

जब शहजादा मुअज्जम भारी सेना के साथ पंजाब में दाखिल हुआ तो राजाओं में घबराहट फैल गयी। शहजादे की सेना ने इन कायर पहाड़ी राजाओं को बहुत परेशान किया और पूरा कर वसूल किया।

अब सेना ने आनंदपुर पर हमला करने की योजना बनायी। शहजादे के साथ उसका मुंशी भाई नंदलाल भी आया था, जो गुरुजी की बड़ी इज्जत करनेवाला सिक्ख था। उसने शहजादे को समझाया कि यह उचित नहीं है। शहजादे ने मीर मुंशी की बात मान ली। युद्ध की भयंकर आंधी से आनंदपुर बच गया।

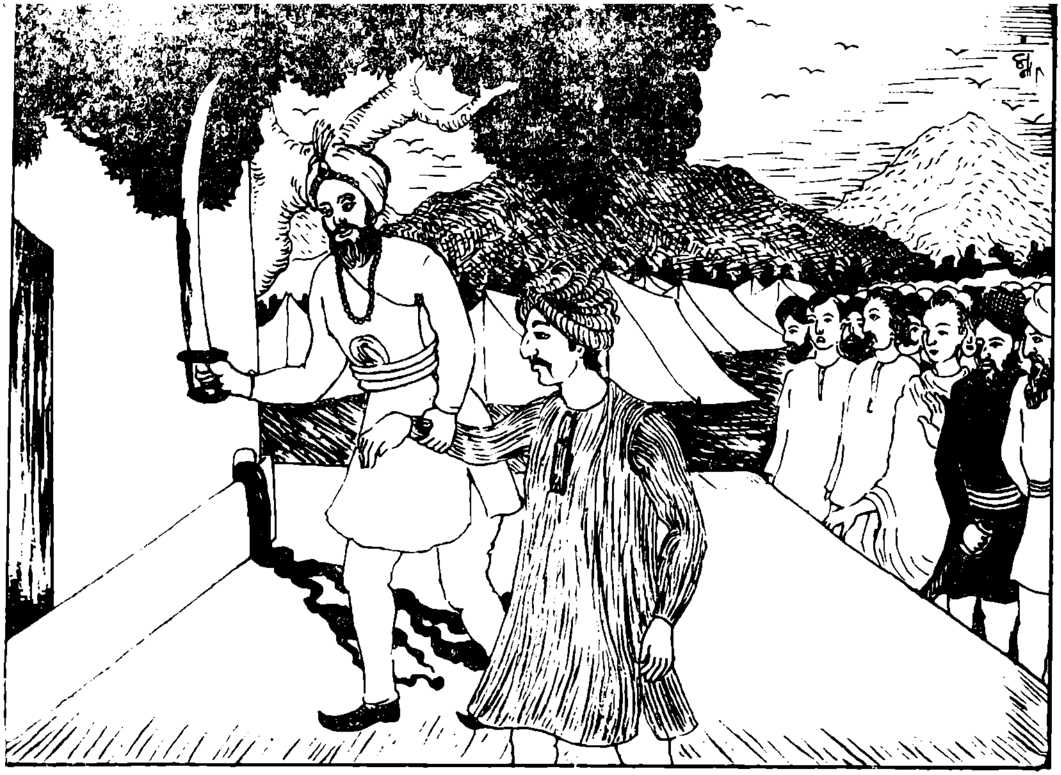
गुरुजी के जीवन में शांति के ये ही कुछ साल आये।

१६९९ ई. की बैसाखी के मौके पर सभी सिक्खों को खबर दी गई कि इस बार बैसाखी पर वे पूरे उत्साह से भाग लें और हथियारों से लैस होकर आयें।

इस विशाल त्योहार की शुरुआत बड़ी नाटकीय हुई। गुरुजी दरबार में आये। अपनी तलवार उन्होंने म्यान से निकाली और सामने विशाल जनसमूह से बोले, "मेरी तलवार को आज एक सिर की जरूरत है। क्या मेरा कोई ऐसा सच्चा सिक्ख भक्त है जो अपना सिर मुझे दे सके?"

लोगों को काठ मार गया। गुरुजी की बात वे समझ नहीं पाये।

गुरु ने अपनी बात दुहरायी। कोई



उत्तर नहीं मिला। गुरु तीसरी बार बोले।

इस बार लाहौर का एक सिक्ख दयाराम उठा।

गुरु ने उसे गहरी नजरों से देखा, और बांह पकड़ कर खींचते हुए पास के एक तंबू में ले गये। अंदर से तलवार चलने की आवाज आयी और खून की धार तंबू से बाहर बह निकली। खून से सनी तलवार लेकर गुरु बाहर निकले।

लोग सकते में आ गये।

गुरु फिर अपनी मांग दुहरा रहे थे

इस बार दिल्ली का एक जा धर्मदास उठ खड़ा हुआ।

गुरु उसे भी तंबू के भीतर ले गये पहली घटना ही फिर दुहरायी गयी

लोग अपनी जगह से उठ-उठक बाहर जाने लगे।

गुरु ने तीन आवाजें लगायीं उनकी आवाज पर तीन और सिक उठ खड़े हुए। उन तीनों के सा

भी एक-एक कर वही हुआ, जो पहले दोनों के साथ हुआ था।

लेकिन यह क्या?

लोगों ने आश्चर्य से देखा कि गुरु भीतर जाकर पांचों सिक्खों को जीते-जागते अपने साथ बाहर ले आये। न तो तंबू से बहता हुआ खून सिक्खों का था और न गुरुजी की तलवार सिक्खों के खून से रंगी थी।

गुरु ने इन पांचों सिक्खों को 'पांच प्यारों' की पदवी प्रदान की। बाद में उन्होंने बताया कि सिक्ख पंथ का यह नया रूप होगा जो खालसा कहलायेगा। इन पांच प्यारों से उस पंथ का जन्म होता है। ये पांच प्यारे सिंह बन गये हैं। इनकी पिछली जात-पांत के बंधन टूट गये हैं।

"तुम सब भी खालसा बनो, नया जीवन शुरू करो", गुरु ने कहा।

उस दिन से गोविंद राय भी गोविंद सिंह बन गये। 'क' अक्षर से शुरू होनेवाली पांच चीजें—कच्छा, कड़ा, कृपाण, कंघा और केश इन सिंहों के लिए जरूरी करार दिया गया। उन्हें किसी भी प्रकार के नशे से दूर रहने का आदेश दिया गया।

गुरुजी चाहते थे कि पहाड़ी राजे भी खालसा पंथ को स्वीकार कर लें। सब लोग आपस के भेद-भाव को भूलकर संगठित हो जायें। लेकिन पहाड़ी राजे गुरुजी से सहमत नहीं थे। वे गुरुजी की इस बढ़ती हुई शक्ति को खत्म करने की योजनाएं बनाने लगे।

वे लोग सरहिंद के सूबेदार वजीर खां के पास गुरुजी की शिकायत लेकर गये। वजीर खां ने औरंगजेब के पास सारी खबरें भेजीं। औरंगजेब ने हुक्म दिया कि जैसे भी हो गुरु गोविंद सिंह की ताकत को कुचल दिया जाये।

आनंदपुर के पास मुगल और पहाड़ी सेनाएं इकट्ठी हो गयीं। मुगलों और पहाड़ियों की सेना खालसा सेना से कई गुना अधिक थी, लेकिन गुरु गोविंद-सिंह डरे नहीं। पांच प्यारों को उन्होंने सेनापतियों के रूप में सेना लेकर लड़ने का हुक्म दिया।

मुगल सोच रहे थे कि पहाड़ी सेना को आगे करके उसे कटवा दिया जाये। इस प्रकार बिना नुकसान के ही जीत मिल जायेगी। दूसरी ओर पहाड़ी सेना भी ऐसा ही चाहती थी कि मुगल सेना आगे बढ़कर लड़े और जीत का लाभ हमें मिल जाये।



घनघोर लड़ाई हुई । गुरु गोविंद-सिंह को भारी विजय मिली। लेकिन लड़ाई के कारण चारों ओर संकट का वातावरण बन गया था। पहाड़ी राजे बार-बार हारकर दुखी और निराश हो गये थे । मुगलों के भी अनेक छोटे-बड़े आक्रमण असफल हो गये थे।

विलासपुर के राजा भीमचंद का बेटा राजा अजमेरचंद दक्षिण में जाकर औरंगजेब से मिला। औरंगजेब को अपने सेनापतियों की लगातार हार के समा चार मिल चुके थे। राजा अजमेरचं से सारी कहानी सुनकर वह क्रोध आग-बबूला हो उठा। उसने सरहि और लाहौर के सूबेदारों के लिए आदेश जारी किए कि आनंदपुर के गुरु क तुरंत गिरफ्तार कर लिया जाये।

भारी संख्या में शाही सेना सूबे दारों की मदद के लिए भेज दी गई

आनंदपुर में इन दिनों दीवाल का त्योहार बड़े धूमधाम से मनाया ज

रहा था। गुरु गोविंद सिंह के मानने-वाले दूसरी जगहों से भी दीवाली मनाने के लिए भारी संख्या में आनंदपुर में जमा हुए थे। अचानक ही दीवाली की खुशी युद्ध के उत्साह में बदल गयी।

एक ओर दिल्ली की शाही सेना, सूबेदारों की सेना और पहाड़ी राजाओं की सेना के लाखों सैनिक थे, दूसरी ओर थी गुरु गोविंद सिंह की कुछ हजार सैनिकों की खालसा सेना। बहुत दिनों तक घमासान लड़ाई होती रही।

दिनों से यह युद्ध महीनों तक पहुंचा। मुगल और पहाड़ी सेनाओं की सख्ती बढ़ती गयी। खाने-पीने की चीजें धीरे-धीरे खत्म हो गयीं। घोड़े और दूसरे जानवर भूख से मरने लगे। सबके प्रिय प्रसादी हाथी ने भी दम तोड़ दिया। चारों ओर मृत्यु का हाहाकार सुनाई देता था। किला खाली कर देने के अलावा अब कोई चारा नहीं रह गया था।

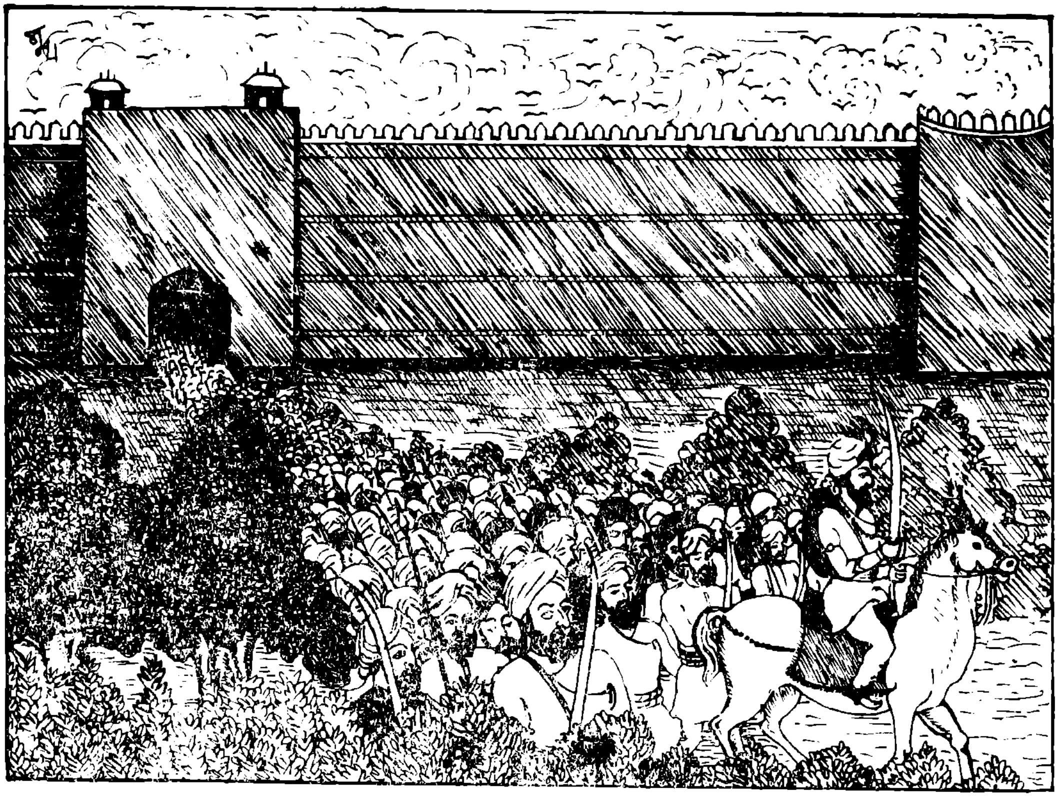
मुगल सेनापतियों, राजाओं तथा बादशाह की ओर से गुरु गोविंद सिंह को यह संदेश भेजा गया कि यदि वे शहर खाली कर दें तो घेरा उठा लिया जायेगा। सिक्खों को कोई तकलीफ नहीं दी जायेगी। गुरु को उनकी बातों पर कोई भरोसा न था। आनंदपुर छोड़ना उनके लिए आसान न था, पर यह कड़वा फैसला उन्हें करना ही पड़ा।

आनंदपुर से नीचे उतरकर कुछ ही मील पहुंचने पर मुगल सेना ने गुरु पर हमला कर दिया।

सर्सा नदी के तट पर भयंकर लड़ाई होने लगी।

गुरु गोविंद सिंह के जीवन में अब लगातार संघर्ष के दिन आये। मुगल सेना उन्हें खोजती हुई बराबर उनका पीछा करती। गुरु अधिक समय तक किसी एक जगह पर रुक नहीं सकते थे। उनका पता लगते ही मुगल सेना आक्रमण करती थी।

चमकौर नामक जगह पर मुगलों की सेना का पहला हमला हुआ, जिसमें उनके दोनों बड़े बेटों ने बहादुरी से लड़ते हुए जान दे दी। उनके दोनों छोटे बेटे सरहिन्द के सूबेदार वजीर खां के हाथों मारे गये। लेकिन निराश होना तो गुरुजी ने कभी सीखा ही न था। उनका प्यार केवल अपने बेटों तक ही सीमित नहीं था। वे हजारों सिक्खों को अपनी संतान मानकर प्यार करते थे।



वे जानते थे कि अपने जीवन की मंजिल तक पहुंचने की लड़ाई में उन्हें ऐसे अनेक बलिदान देने होंगे। जो लड़ाई वे लड़ रहे थे, वह लड़ाई हर इंसान को धार्मिक आजादी का अधिकार दिलाने के लिए लड़ी जा रही थी।

अनेक वर्षों तक लगातार संघर्ष के बाद गुरु ने मालवा में एक जगह पर दम लिया। उस जगह का नाम उन्होंने दमदमा रखा। उस समय तक देश की राजनैतिक हालत में बहुतेरे बदलाव आ चुके थे। औरंगजेब फिर दक्षिण की समस्याओं में उलझ गया था। पंजाब से शाही फौजें वापस बुला ली गयी थीं।

बदली हुई हालत में गुरु गोविंद सिंह ने दमदमा में खुद पढ़ाने-लिखाने का काम शुरू किया। बड़े-बड़े विद्वान उनके पास ज्ञान पाने के लिए आते

इस बीच गुरु गोविंद सिंह के प्रति औरंगजेब का नजरिया भी काफी बदल गया था। औरंगजेब को गुरुजी ने एक खत लिखा था जिसमें उसका ध्यान, उसकी गलतियों की ओर खींचा गया था। गुरुजी के खत से प्रभावित होकर औरंगजेब ने पंजाब के हाकिमों को आदेश दिया कि वे गुरुजी को परेशान न करें।

कुछ ही वर्षों बाद औरंगजेब की मृत्यु हो गयी।

उसका बड़ा बेटा बहादुरशाह के नाम से बादशाह बना। वह गुरु गोविंद-सिंह का बहुत आदर करता था। वह जानता था कि वे किसी धर्म के दुश्मन नहीं हैं। धर्म के नाम पर अत्याचार और अन्याय करनेवालों के दुश्मन हैं। उसने गुरुजी को मिलने के लिए बुलाया और उन्हें बेशकीमती उपहार भेंट में दिए। गुरुजी के ये कुछ वर्ष शांति से बीते। बहादुरशाह धर्म के बारे में उदार नजरिया रखता था। उसे गुरु गोविंद सिंह के धर्म-प्रचार के काम से कोई विरोध नहीं था।

बादशाह से गुरुजी के ये अच्छे संबंध वजीर खां को अच्छे नहीं लगे। गुरुजी का जीवित रहना उसे अपने लिए खतरनाक लगने लगा। उसने फैसला किया कि वह गुरुजी को खत्म करवा देगा। उसने दो पठान गुरुजी के पीछे लगा दिए। मौका पाते ही उन्होंने गुरुजी पर हमला किया। वे सोने के के लिए पलंग पर लेटे हुए थे कि एक पठान ने अचानक उनके पेट में छुरा भोंक दिया।

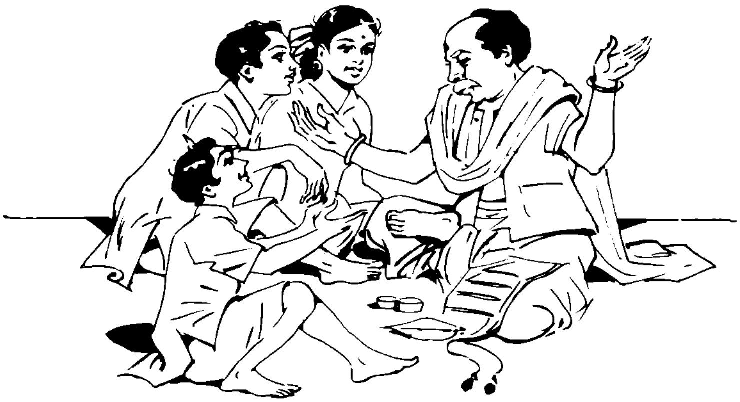
चिकित्सक बुलाये गये। उपचार हुआ, लेकिन अब गुरुजी का अंत आ ही गया था।

गुरु गोविंद सिंह ने अपने मानने-वालों से कहा, "मेरी मृत्यु पर शोक मत करना। अनेक संतों और गुरुओं की वाणी ग्रंथ में संकलित है। अब से ग्रंथ को ही गुरु मानना और संतों की वाणी से ही कठिनाई में अपना रास्ता खोजना।"

सन् ७ अक्तूबर, १७०८ ई. को ४२ वर्ष की आयु में गुरु गोविंद सिंह ने प्राण त्याग दिए। उनका जीवन मानवता के इतिहास में एक अनुपम उदाहरण है। ●

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना १९३८ में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्प्रयत्नों से हुई थी। इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा विकसित करने की रही है, जिसे आम जनता आसानी से समझ सके और जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके। वह भाषा है हिन्दुस्तानी !

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान और आनन्द से भरी कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है, यह उसकी **चौथी** किश्त है। इस सेट के हर किताब की कीमत दो रुपये होगी।



हमारे आगामी प्रकाशन

- राजा महाजनक
- संत जलाराम
- कंजूस इल्लीस
- कूरगडु मुनि
- कण देवता
- बक राक्षस का वध
- हनुमान
- स्वामी विवेकानंद
- सुनहरा नेवला
- भाई हो तो भरत जैसा


बच्चों की कहानियां
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बंबई-४००००२
अ
एकनिष्ठ एकलव्य
सच्चा तप
भगवान जब भिखारी बने
सत्यकाम जाबाल
रैक्वमुनि
अन्नदाता सुर्य
राजा महाशीलव
चंदनबाला
मूसा की कहानी